सबद
पीयर-रिव्यूड त्रैमासिक शोध पत्रिका
वर्ष- 1, अंक- 3 (जुलाई–सितंबर 2026)
ISSN: 3139-5317 (Online), 3139-5325 (Print)

निराला के काव्य में नारी-जीवन के विविध आयाम: सौंदर्य, श्रम, संघर्ष और सामाजिक यथार्थ

ऋचा सिंह
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

सारांश

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के काव्य में नारी-जीवन केवल सौंदर्य, प्रेम अथवा करुणा का विषय नहीं है, बल्कि वह सामाजिक विषमता, श्रम, पारिवारिक संबंध, जातिगत संरचना, विवाह-संबंधी रूढ़ियों और मानवीय स्वाभिमान से जुड़ी बहुआयामी अनुभूति के रूप में उपस्थित होता है। प्रस्तुत आलेख का केंद्रीय प्रश्न यह है कि निराला स्त्री को किस सीमा तक स्वतंत्र मानवीय सत्ता के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं और कहाँ उनकी नारी-दृष्टि अपने युग के सांस्कृतिक आदर्शों तथा पुरुष-केंद्रित दृष्टि से प्रभावित रहती है। 'जुही की कली', '(प्रिय) यामिनी जागी', 'विधवा', 'वह तोड़ती पत्थर', 'रानी और कानी', 'प्रेम-संगीत', 'सरोज-स्मृति' और 'तुलसीदास' के आधार पर नारी के प्रेमिका, विधवा, श्रमिक, पुत्री, निम्नवर्गीय स्त्री और प्रेरक व्यक्तित्व जैसे रूपों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि निराला नारी के प्रति करुणा से आगे बढ़कर उसके श्रम और सामाजिक संघर्ष को काव्य के केंद्र में लाते हैं। यद्यपि अनेक प्रसंगों में स्त्री की अपनी वाणी सीमित है, फिर भी हिंदी कविता में नारी के सामाजिक और मानवीय अस्तित्व को व्यापक बनाने में निराला का योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

बीज शब्द: निराला, नारी-जीवन, स्त्री-संवेदना, श्रम, सामाजिक यथार्थ, स्वाधीनता, छायावाद।

मुख्य आलेख

निराला के काव्य में नारी-जीवन का अध्ययन करते समय सबसे पहले यह प्रश्न उठता है कि उनकी कविता में स्त्री केवल कवि की प्रेमानुभूति, करुणा और सौंदर्य-दृष्टि का विषय है अथवा वह अपने सामाजिक अस्तित्व, श्रम, इच्छा, पीड़ा और स्वाभिमान के साथ स्वतंत्र मनुष्य के रूप में भी सामने आती है। निराला की रचनात्मक यात्रा इस प्रश्न का एकरेखीय उत्तर नहीं देती। उनके काव्य में छायावादी सौंदर्य-संवेदना और सामाजिक यथार्थ दोनों सक्रिय हैं। आरंभिक प्रेम-कविताओं में स्त्री का सौंदर्य और देह केंद्रीय दिखाई देते हैं, किंतु आगे चलकर यही काव्य-दृष्टि विधवा, श्रमिक स्त्री, निम्नवर्गीय युवती, पुत्री और सामाजिक रूढ़ियों से घिरी नारी की ओर विस्तृत होती है। इस विकास के कारण निराला की नारी-दृष्टि को केवल रोमानी अथवा केवल सामाजिक श्रेणी में सीमित नहीं किया जा सकता। 'जुही की कली' में प्रकृति और नारी-सौंदर्य का गहरा अंतर्संबंध दिखाई देता है। निराला जुही की कली का मानवीकरण एक तरुण स्त्री के रूप में करते हैं—

"विजन-वन वल्लरी पर
सोती थी सुहाग-भरी-स्नेह-स्वप्न-मग्न
अमल-कोमल-तनु तरुणी—जुही की कली,
दृग बंद किए, शिथिल-पत्रांक में।"[1]

वर्ष- 1, अंक- 3 (जुलाई–सितंबर 2026)
ISSN: 3139-5317 (Online), 3139-5325 (Print)

यहाँ 'सुहाग-भरी', 'कोमल-तनु' और 'तरुणी' जैसे पद प्रकृति को स्त्री-अनुभूति के निकट ले आते हैं। सोई हुई कली केवल वनस्पति नहीं रहती, वह प्रेम की प्रतीक्षा और कामना से युक्त तरुणी का रूप धारण करती है। कविता में नारी-सौंदर्य के प्रति आकर्षण स्पष्ट है, किंतु यह वर्णन केवल बाहरी रूप पर आधारित नहीं है; इसमें संवेदनात्मक वातावरण, प्रतीक्षा और अंतर्निहित कामना भी सक्रिय है। फिर भी आधुनिक दृष्टि से यह ध्यान देने योग्य है कि यहाँ स्त्री स्वयं अपनी इच्छा व्यक्त नहीं करती। उसकी उपस्थिति कवि की दृष्टि और रूपक के माध्यम से निर्मित होती है। इस प्रकार कविता एक ओर स्त्री-देह को सहज सौंदर्यात्मक स्वीकार्यता देती है, दूसरी ओर उसे देखने वाली दृष्टि मुख्यतः पुरुष की बनी रहती है। '(प्रिय) यामिनी जागी' में नारी-सौंदर्य का चित्र और अधिक स्पष्ट तथा देहधर्मी है—

"खुले केश अशेष शोभा भर रहे,
पृष्ठ-ग्रीवा-बाहु-उर पर तर रहे;
बादलों में घिर अपर दिनकर रहे,
ज्योति की तन्वी, तड़ित-द्युति ने क्षमा माँगी।"[2]

इन पंक्तियों में स्त्री के केश, ग्रीवा, बाहु और उर का चित्रण है, किंतु यह वर्णन भोगवादी दृष्टि से संचालित नहीं होता। देह यहाँ प्रेम की संवेदना और सौंदर्य की आभा से जुड़ी है। निराला प्रेम और वासना के बीच एक सांस्कृतिक-सौंदर्यात्मक संतुलन स्थापित करने का प्रयास करते हैं। नंददुलारे वाजपेयी ने भी निराला की श्रृंगार-दृष्टि में संयम, दार्शनिकता और भावगत उदात्तता की विशेषता स्वीकार की है।[3] यह मूल्यांकन निराला के प्रेम-काव्य को समझने में उपयोगी है, क्योंकि उनकी कविता देह से विमुख नहीं होती, पर उसे केवल उपभोग की वस्तु में भी परिवर्तित नहीं करती।

फिर भी आज की आलोचनात्मक दृष्टि से यह प्रश्न बना रहता है कि स्त्री की गरिमा को स्थापित करने के लिए उसकी कामना को त्याग, पवित्रता अथवा आत्मिक प्रेम में रूपांतरित करना कितना आवश्यक है। निराला अपने समय की नैतिक-सांस्कृतिक चेतना से पूरी तरह बाहर नहीं निकलते। उनकी प्रेम-कविताओं में नारी की सुंदर उपस्थिति है, किंतु उसकी स्वतंत्र वाणी अपेक्षाकृत कम सुनाई देती है। आगे की सामाजिक कविताओं में यह स्थिति बदलती है; वहाँ नारी सौंदर्य की अपेक्षा जीवन-संघर्ष के अधिक कठोर धरातल पर उपस्थित होती है।

विधवा और श्रमिक स्त्री : करुणा से सामाजिक यथार्थ तक

निराला की नारी-दृष्टि का महत्त्वपूर्ण रूप 'विधवा' कविता में दिखाई देता है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में विधवा स्त्री की उपेक्षा और उसके जीवन पर आरोपित कठोरताओं को निराला गहरी करुणा के साथ व्यक्त करते हैं—

"वह इष्टदेव के मंदिर की पूजा-सी,
वह दीपशिखा-सी शांत भाव में लीन,
वह टूटे तरु की छुटी लता-सी दीन—
दलित भारत की ही विधवा है।"[4]

निराला विधवा को किसी अपशकुन या सामाजिक बोझ की तरह नहीं देखते। 'इष्टदेव के मंदिर की पूजा' और 'दीपशिखा' के माध्यम से वे उसे नैतिक गरिमा प्रदान करते हैं, जबकि 'टूटे तरु की छुटी लता' उसके असुरक्षित जीवन की करुण स्थिति को प्रकट करती है। सबसे महत्त्वपूर्ण है अंतिम पंक्ति, जहाँ एक स्त्री की व्यक्तिगत पीड़ा पूरे 'दलित भारत' की सामाजिक पीड़ा का प्रतीक बन जाती है। इस प्रकार विधवा का प्रश्न केवल व्यक्तिगत दुर्भाग्य नहीं रह जाता, बल्कि सामाजिक व्यवस्था की अमानवीयता का संकेत बनता है।

वर्ष- 1, अंक- 3 (जुलाई–सितंबर 2026)
ISSN: 3139-5317 (Online), 3139-5325 (Print)

किन्तु 'विधवा' की नारी-छवि में करुणा के साथ आदर्शीकरण भी है। विधवा की गरिमा उसकी शांति, सहनशीलता और त्याग से निर्मित होती है। वह अन्याय का प्रतिरोध करती हुई नहीं, उसे सहती हुई दिखाई देती है। यह सीमा उस समय की सुधारवादी चेतना से जुड़ी है जिसमें पीड़ित स्त्री के प्रति सहानुभूति तो थी, किंतु उसकी सक्रिय सामाजिक एजेंसी की कल्पना अभी पूरी तरह विकसित नहीं हुई थी। निराला की सामाजिक चेतना आगे चलकर इससे अधिक कठोर और यथार्थपरक रूप ग्रहण करती है। 'वह तोड़ती पत्थर' में नारी अब 'दीन लता' नहीं है। यहाँ वह कठिन श्रम में सक्रिय स्त्री है—

"श्याम तन, भर बँधा यौवन,
नत नयन प्रिय, कर्म-रत मन,
गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार-बार प्रहार।"[5]

इन पंक्तियों में स्त्री की देह दिखाई देती है, पर उसकी केंद्रीय पहचान उसका श्रम है। 'कर्म-रत मन', 'गुरु हथौड़ा' और 'बार-बार प्रहार' उसे निष्क्रिय करुणा की वस्तु बनने से रोकते हैं। वह कठोर परिस्थितियों में श्रम कर रही है। उसके पास छाया तक उपलब्ध नहीं, जबकि उसके सामने सामाजिक समृद्धि का संसार उपस्थित है। इस दृश्य में वर्गीय विषमता बिना घोषणात्मक भाषा के सामने आती है। स्त्री का श्रम और आसपास का वैभव मिलकर समाज की असमान संरचना को उद्घाटित करते हैं।

'विधवा' और 'वह तोड़ती पत्थर' की नारी-छवियों की तुलना निराला की दृष्टि में आए परिवर्तन को स्पष्ट करती है। 'विधवा' में मुख्य भाव करुणा है; 'वह तोड़ती पत्थर' में करुणा के भीतर श्रम, संघर्ष और आत्मसम्मान भी जुड़े हैं। पहली स्त्री को कवि टूटी हुई लता के रूप में देखता है, दूसरी स्त्री के हाथ में भारी हथौड़ा है। यह परिवर्तन हिंदी कविता में नारी के सामाजिक रूप के विस्तार का संकेत है।

फिर भी 'वह तोड़ती पत्थर' आधुनिक स्त्रीवादी अर्थ में पूर्णतः स्त्री-केंद्रित कविता नहीं है। 'भर बँधा यौवन' जैसे पद यह बताते हैं कि कवि श्रमिक स्त्री को देखते समय उसके रूप और देह से पूरी तरह मुक्त नहीं है। पर यहाँ सौंदर्य-दृष्टि उसके श्रम को विस्थापित नहीं करती। उसका शरीर किसी विलासी सौंदर्य का नहीं, बल्कि कठोर श्रम का शरीर है। इसी कारण कविता की नारी-छवि निराला के सामाजिक काव्य की विशिष्ट उपलब्धि बनती है।

परिवार, विवाह, जाति और स्त्री की सामाजिक स्थिति

नारी-जीवन की सामाजिक विडंबनाओं का एक विशिष्ट रूप 'रानी और कानी' में सामने आता है। यह कविता उस साधारण ग्रामीण या निम्न-मध्यवर्गीय युवती के जीवन को केंद्र में लाती है जिसका मूल्यांकन समाज उसके श्रम और मानवीय गुणों से कम तथा उसके रूप से अधिक करता है—

"बीनती है, काँड़ती है, कूटती है, पीसती है,
डलियों के सीले अपने रूखे हाथों मीसती है,
घर बुहारती है, करकट फेंकती है,
और घड़े भरती है पानी।"[6]

वर्ष- 1, अंक- 3 (जुलाई–सितंबर 2026)
ISSN: 3139-5317 (Online), 3139-5325 (Print)

यहाँ स्त्री के घरेलू श्रम का विस्तार अत्यंत अर्थपूर्ण है। वह घर की व्यवस्था में लगातार काम करती है, किंतु उसके श्रम को स्वतंत्र सामाजिक मूल्य नहीं मिलता। विवाह का प्रश्न सामने आते ही उसका रंग, शारीरिक बनावट और आँख अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं। माँ की चिंता भी इसी व्यवस्था से पैदा होती है जिसमें पुत्री का भविष्य विवाह की सफलता से जोड़ा जाता है।

'रानी और कानी' का महत्त्व इसलिए भी है कि निराला सौंदर्य के स्थापित सामाजिक मानदंडों पर व्यंग्य करते हैं। लड़की की उपयोगिता और संवेदनशीलता उसके रूपगत तथाकथित दोषों के सामने गौण कर दी जाती है। यह समस्या केवल पुरुषों तक सीमित नहीं है; पड़ोस की स्त्रियाँ भी उसी सामाजिक मूल्य-व्यवस्था को दोहराती हैं। इस प्रकार निराला यह संकेत करते हैं कि सामाजिक रूढ़ियाँ केवल सत्ता के बाहरी दबाव से नहीं चलतीं, वे सामुदायिक व्यवहार और मानसिकता में भी घर कर जाती हैं।

आज के संदर्भ में यह कविता त्वचा के रंग, शारीरिक बनावट और दिव्यांगता से जुड़े सामाजिक पूर्वग्रहों के कारण और अधिक प्रासंगिक हो जाती है। निराला का समय आधुनिक स्त्री-अधिकार विमर्श से पूर्व का था, फिर भी वे यह पहचान लेते हैं कि विवाह-व्यवस्था में स्त्री की पहचान उसके व्यक्तित्व से अधिक उसके रूप पर निर्भर कर दी जाती है। जाति और नारी की स्थिति का एक अलग रूप 'प्रेम-संगीत' में दिखाई देता है—

"बम्हन का लड़का
मैं उसको प्यार करता हूँ।
जात की कहारिन वह,
मेरे घर की है पनहारिन वह।"[7]

इन पंक्तियों में प्रेम जातिगत सीमा को पार करता हुआ दिखाई देता है। ब्राह्मण युवक का कहारिन स्त्री से प्रेम सामाजिक रूढ़ियों के विरुद्ध जाता है। किंतु कविता को केवल जाति-विरोधी प्रेम की कथा मान लेना पर्याप्त नहीं है। स्त्री की पहचान यहाँ भी उसके जातिगत और सेवा-संबंधी स्थान से जुड़ी हुई है—वह 'कहारिन' और 'पनहारिन' है। पुरुष प्रेम व्यक्त करता है, किंतु स्त्री की अपनी स्वीकृति, असहमति अथवा इच्छा का स्वतंत्र स्वर सामने नहीं आता।

यहीं निराला की सामाजिक दृष्टि का एक अंतर्विरोध उपस्थित होता है। वे जातिगत बाधा के विरुद्ध प्रेम की संभावना को स्वीकार करते हैं, पर संबंध की शक्ति-संरचना को पूरी तरह विघटित नहीं कर पाते। प्रेम करने वाला पुरुष सामाजिक रूप से उच्च जाति का है और स्त्री उसके घर से सेवा-संबंध में जुड़ी है। आधुनिक आलोचना के लिए यह प्रसंग महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह बताता है कि केवल भावनात्मक आकर्षण सामाजिक बराबरी की गारंटी नहीं देता।

निराला की नारी-दृष्टि का सबसे आत्मीय और व्यक्तिगत रूप 'सरोज-स्मृति' में दिखाई देता है। यहाँ स्त्री कोई अमूर्त प्रतीक नहीं, कवि की पुत्री है। सरोज के जीवन और मृत्यु के माध्यम से निराला पिता, पुत्री, आर्थिक अभाव और सामाजिक जिम्मेदारी के जटिल संबंधों को सामने लाते हैं—

"धन्ये, मैं पिता निरर्थक था,
कुछ भी तेरे हित न कर सका।
जाना तो अर्थागमोपाय
पर रहा सदा संकुचित-काय।"[8]

वर्ष- 1, अंक- 3 (जुलाई–सितंबर 2026)
ISSN: 3139-5317 (Online), 3139-5325 (Print)

इन पंक्तियों में पिता का शोक केवल पुत्री-वियोग का शोक नहीं है। उसके भीतर आर्थिक असमर्थता का गहरा अपराध-बोध भी है। निराला स्वयं को इस कारण असफल पिता समझते हैं कि वे अपनी पुत्री के लिए पर्याप्त आर्थिक सुविधा उपलब्ध नहीं करा सके। यहाँ नारी-जीवन आर्थिक संरचना से सीधे जुड़ता है। बेटी की शिक्षा, विवाह और भविष्य पिता की सामाजिक तथा आर्थिक क्षमता से बँधे हुए हैं।

'सरोज-स्मृति' में विवाह-संबंधी रूढ़ियों से निराला की असहमति भी दिखाई देती है। वे परंपरा का यंत्रवत् पालन नहीं करना चाहते। इससे उनके भीतर मौजूद सुधारवादी और व्यक्तिस्वातंत्र्यपरक चेतना सामने आती है। सरोज का चित्रण अत्यंत आत्मीय है; वह केवल मृत पुत्री नहीं, पिता की स्मृति, स्नेह और जीवन-संघर्ष से जुड़ी हुई स्वतंत्र मानवीय उपस्थिति है।

फिर भी यहाँ एक आलोचनात्मक सीमा दिखाई देती है। सरोज को हम मुख्यतः पिता की स्मृति और दृष्टि के माध्यम से जानते हैं। उसकी अपनी आवाज़ सीमित है। पिता उसके जीवन, सौंदर्य, विवाह और मृत्यु को अर्थ देता है। इसका अर्थ यह नहीं कि कविता की आत्मीयता कम हो जाती है, बल्कि यह दिखाता है कि निराला की प्रगतिशील संवेदना भी पुरुष-केंद्रित कथन-स्थिति से पूरी तरह बाहर नहीं निकलती।

नारी की प्रेरक शक्ति, सीमाएँ और समकालीन अर्थ

निराला के काव्य में स्त्री का एक अन्य रूप प्रेरणा और सृजनात्मक शक्ति के रूप में सामने आता है। 'तुलसीदास' में रत्नावली केवल पत्नी नहीं रहती; वह कवि-चेतना को परिवर्तित करने वाली प्रेरक शक्ति बनती है। रत्नावली की स्मृति और प्रभाव को निराला इस रूप में प्रस्तुत करते हैं—

"देखा शारदा नील-वसना,
हैं सम्मुख स्वयं सृष्टि-रशना,
जीवन-समीर-शुचि-निःश्वसना,
वरदात्री।"[9]

यहाँ स्त्री का रूप 'शारदा', 'सृष्टि-रशना' और 'वरदात्री' में रूपांतरित होता है। रत्नावली तुलसी की रचनात्मक चेतना के विकास में निर्णायक प्रेरणा बनती है। परंपरागत कथा में भी रत्नावली की भूमिका तुलसी के वैराग्य से जुड़ी हुई है, किंतु निराला उसके प्रभाव को अधिक व्यापक सांस्कृतिक और सृजनात्मक अर्थ देते हैं।

यह प्रस्तुति स्त्री को सक्रिय प्रेरक शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित करती है, पर इसके भीतर भी एक सीमा मौजूद है। वास्तविक स्त्री को देवी, शक्ति और प्रेरणा में रूपांतरित करना उसे ऊँचा अवश्य उठाता है, किंतु इससे उसका सामान्य मानवीय अस्तित्व पीछे भी जा सकता है। भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक परंपरा में स्त्री को 'देवी' कहना सदैव उसकी वास्तविक सामाजिक स्वतंत्रता का पर्याय नहीं रहा है। निराला के यहाँ भी नारी का प्रतीकात्मक उत्थान और सामाजिक स्वायत्तता हमेशा एक ही स्तर पर नहीं चलते।

यदि 'जुही की कली', '(प्रिय) यामिनी जागी', 'विधवा', 'वह तोड़ती पत्थर', 'रानी और कानी', 'प्रेम-संगीत', 'सरोज-स्मृति' और 'तुलसीदास' को एक साथ पढ़ा जाए तो स्पष्ट होता है कि निराला के यहाँ नारी कोई एक स्थिर प्रतिमा नहीं है। वह प्रेमिका है, विधवा है, श्रमिक है, घरेलू काम में लगी युवती है, निम्न जाति की स्त्री है, पुत्री है और पुरुष की रचनात्मक चेतना को बदलने वाली प्रेरक शक्ति भी है। यही विविधता निराला की नारी-दृष्टि को व्यापक बनाती है।

वर्ष- 1, अंक- 3 (जुलाई–सितंबर 2026)
ISSN: 3139-5317 (Online), 3139-5325 (Print)

उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि वे नारी को केवल सौंदर्य के सीमित छायावादी घेरे में नहीं रखते। 'वह तोड़ती पत्थर' जैसी कविता स्त्री के श्रम को काव्य का केंद्रीय विषय बनाती है; 'विधवा' सामाजिक रूढ़ि की मानवीय कीमत सामने लाती है; 'रानी और कानी' विवाह और रूपगत मानकों की विडंबना खोलती है; 'सरोज-स्मृति' पारिवारिक संबंधों को आर्थिक और सामाजिक यथार्थ से जोड़ती है। इस प्रकार निराला हिंदी कविता में नारी के अनुभव-क्षेत्र का उल्लेखनीय विस्तार करते हैं।

साथ ही उनकी सीमाओं को स्वीकार करना भी आवश्यक है। अनेक कविताओं में स्त्री की अपनी वाणी अपेक्षाकृत कम है। उसे पुरुष-कवि देखता है, उसका वर्णन करता है और कई बार उसके अनुभव का अर्थ भी वही निर्धारित करता है। कहीं स्त्री का सौंदर्य आदर्शीकृत है, कहीं उसका दुख त्याग और पवित्रता में रूपांतरित हो जाता है और कहीं उसका व्यक्तित्व देवी या प्रेरणा के रूप में उदात्तीकृत हो जाता है। इन प्रवृत्तियों को निराला के समय और सांस्कृतिक परिवेश से अलग करके नहीं देखा जा सकता। फिर भी उनकी कविता अपने युग की रूढ़ियों को केवल स्वीकार नहीं करती। वह उनसे संघर्ष भी करती है। विधवा के प्रति सामाजिक दृष्टि, स्त्री-श्रम की उपेक्षा, विवाह में सौंदर्य-केंद्रित मूल्यांकन, जातिगत भेदभाव और आर्थिक असमानता जैसे विषयों को कविता में स्थान देना उस समय के साहित्यिक संदर्भ में महत्त्वपूर्ण था। इस अर्थ में निराला की नारी-दृष्टि परंपरा और आधुनिकता के संक्रमण की दृष्टि है।

आज उनकी कविताएँ इसलिए भी प्रासंगिक हैं कि नारी के घरेलू और आर्थिक श्रम की उपेक्षा, विवाह का दबाव, शरीर और रंग से जुड़ा भेदभाव, जाति और लैंगिक असमानता तथा स्त्री की स्वतंत्र इच्छा से जुड़े प्रश्न समाप्त नहीं हुए हैं। वर्तमान स्त्री-विमर्श निराला की संवेदना को आगे बढ़ाते हुए यह भी पूछता है कि स्त्री के प्रति सहानुभूति और सम्मान पर्याप्त हैं या उसके निर्णय, इच्छा और अभिव्यक्ति को भी स्वतंत्र सामाजिक स्थान मिलना चाहिए। इस प्रश्न की कसौटी पर निराला को पूर्ण आधुनिक स्त्रीवादी कवि कहना उचित नहीं होगा, किंतु हिंदी कविता में स्त्री को अधिक व्यापक मानवीय और सामाजिक संदर्भ में देखने की दिशा में उनकी भूमिका निर्विवाद रूप से महत्त्वपूर्ण है।

निष्कर्ष

निराला के काव्य में नारी-जीवन का चित्रण उनकी रचनात्मक चेतना के व्यापक विकास को सामने लाता है। आरंभिक प्रेम-काव्य में नारी सौंदर्य और अनुराग की संवेदनशील आकृति के रूप में उपस्थित होती है, पर आगे चलकर उसकी स्थिति अधिक सामाजिक और यथार्थपरक होती जाती है। विधवा की असुरक्षा, पत्थर तोड़ती स्त्री का श्रम, कानी की विवाह-संबंधी समस्या, कहारिन की जातिगत स्थिति, सरोज के जीवन से जुड़ा आर्थिक और पारिवारिक संघर्ष तथा रत्नावली की प्रेरक भूमिका मिलकर नारी के अनेक जीवन-रूपों को प्रकट करते हैं।

निराला की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि यह है कि उन्होंने स्त्री को केवल सौंदर्य और प्रेम की वस्तु के रूप में नहीं देखा। विशेष रूप से श्रमिक, उपेक्षित और सामाजिक बंधनों से घिरी स्त्रियों को कविता के केंद्र में लाकर उन्होंने हिंदी काव्य के अनुभव-क्षेत्र को व्यापक बनाया। उनकी नारी-संवेदना में करुणा के साथ सामाजिक प्रश्नों की पहचान भी है।

इसके साथ ही उनकी दृष्टि की सीमाएँ भी हैं। अनेक स्त्री-पात्र पुरुष-कथन के माध्यम से सामने आते हैं और उनकी स्वतंत्र आवाज़ सीमित रहती है। कहीं स्त्री की गरिमा को त्याग और पवित्रता में तथा कहीं देवीत्व और प्रेरणा में रूपांतरित कर दिया जाता है। इन सीमाओं के बावजूद निराला अपने समय की रूढ़ नारी-छवि को कई स्तरों पर तोड़ते हैं और स्त्री के श्रम, दुख, प्रेम तथा मानवीय गरिमा को साहित्यिक महत्त्व प्रदान करते हैं। अतः उनके काव्य में नारी-

जीवन परंपरा और आधुनिकता, करुणा और प्रतिरोध तथा आदर्शीकरण और सामाजिक यथार्थ के बीच विकसित होती हुई एक जटिल किंतु महत्त्वपूर्ण साहित्यिक चेतना के रूप में सामने आता है।

संदर्भ सूची

1. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी, जुही की कली, निराला संचयिता, संपा. रमेशचंद्र शाह, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2010, पृ. 42
2. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी, (प्रिय) यामिनी जागी, निराला संचयिता, संपा. रमेशचंद्र शाह, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2010, पृ. 59
3. वाजपेयी, नंददुलारे, श्री सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला, हिंदी साहित्य : बीसवीं शताब्दी, लखनऊ, इंडियन बुक डिपो, 1949, पृ. 137
4. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी, विधवा, निराला रचनावली, खंड 1, संपा. नंदकिशोर नवल, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 1983, पृ. 72
5. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी, वह तोड़ती पत्थर, निराला संचयिता, संपा. रमेशचंद्र शाह, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2010, पृ. 107
6. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी, रानी और कानी, निराला संचयिता, संपा. रमेशचंद्र शाह, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2010, पृ. 121
7. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी, प्रेम-संगीत, निराला संचयिता, संपा. रमेशचंद्र शाह, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2010, पृ. 120
8. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी, सरोज-स्मृति, निराला संचयिता, संपा. रमेशचंद्र शाह, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2010, पृ. 88
9. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी, तुलसीदास, निराला रचनावली, खंड 1, संपा. नंदकिशोर नवल, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 1983, पृ. 303